

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 11: मन्वन्तर आदि काल-विभाग

13 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



समय की सबसे छोटी सम्भव इकाई क्या है? और सबसे बड़ी? इस अध्याय में मैत्रेय दोनों प्रश्नों का उत्तर एक साथ देते हैं — एक अविभाज्य परमाणु से आरम्भ करके, धैर्यपूर्वक इकाई-दर-इकाई, ब्रह्मा के सम्पूर्ण सौ वर्ष के जीवन-काल तक पहुँचते हुए, और विदुर को यह दिखाते हुए कि काल का यह विशाल ढाँचा, अन्ततः, उस भगवान् की एक पलक झपकने से अधिक कुछ नहीं है जो स्वयं काल से परे स्थित हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञड में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। दशम अध्याय का समापन मैत्रेय के प्राथमिक सृष्टि के वर्णन पर हुआ था — तत्त्वों, इन्द्रियों तथा ब्रह्माण्ड के अण्डे का भगवान् की इच्छा से क्रमिक प्रकटन, जो अन्ततः उस विश्व-रूप में परिणत हुआ जिसमें भगवान् पुरुष के रूप में प्रविष्ट हुए। विदुर, जो अभी-अभी सुनी गई सृष्टि के स्वरूप को और अधिक समझना चाहते हैं, अब वह प्रश्न पूछते हैं जो तृतीय स्कन्ध के शेष ब्रह्माण्ड-विज्ञान को आगे बढ़ाएगा: यदि यह सब कुछ काल में विद्यमान है, तो काल स्वयं वस्तुतः क्या है? इस एकादश अध्याय में, मैत्रेय एक ऐसी सटीकता से उत्तर देते हैं जो भक्ति के ग्रन्थ में लगभग चकित करने वाली है — काल के सम्पूर्ण मापदण्ड को इकाई-दर-इकाई प्रस्तुत करते हुए, उस कण से जो और विभाजित नहीं हो सकता, उस जीवन-काल तक जो मनुष्य के करोड़ों वर्षों में गिना जाता है, और अन्त में यह शान्त स्मरण कराते हुए कि यह सम्पूर्ण अपरिमेय विशालता, उस भगवान् के लिए जो इसे धारण करते हैं, एक पलक झपकने से अधिक कुछ नहीं है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 11 (एकादश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: मन्वन्तर आदि काल-विभाग
- मुख्य वक्ता: मैत्रेय, विदुर के एक संक्षिप्त प्रश्न सहित — यह सम्पूर्ण कथा श्रीशुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को, तथा सूत गोस्वामी द्वारा ऋषि शौनक एवं नैमिषारण्य की सभा को सुनाई गई
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित (कथा-ढाँचे के भीतर); विदुर (संवाद के भीतर)
- मुख्य स्थल: मैत्रेय का आश्रम, जहाँ विदुर सृष्टि तथा ब्रह्माण्ड-विज्ञान पर चल रहे दीर्घ संवाद में बैठे हैं
- मुख्य विषय: ब्रह्माण्डीय काल का सम्पूर्ण तकनीकी मापदण्ड — अविभाज्य परमाणु से लेकर मानव-पंचांग, चार युग, ब्रह्मा का एक दिन-रात, चौदह मन्वन्तर, तीनों लोकों का आवधिक प्रलय, ब्रह्मा के जीवन के दो पराध, तथा उस भगवान् का सच्चा, अपरिवर्तनशील स्वरूप जो काल के इस सम्पूर्ण मापदण्ड से परे स्थित हैं
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 1–41 (गीता प्रेस क्रमांकन; देखें सत्यापन-टिप्पणियाँ)
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

अविभाज्य परमाणु से वर्ष के मापदण्ड तक

मैत्रेय इस अध्याय का आरम्भ किसी कथा से नहीं, अपितु एक परिभाषा से करते हैं, और उसकी सटीकता ही आगे की सम्पूर्ण शिक्षा का स्वर निर्धारित करती है। परमाणु, वे बताते हैं, पदार्थ का वह सूक्ष्मतम कण है जो और विभाजित नहीं हो सकता, जो अभी अन्य कणों के साथ संयुक्त नहीं हुआ है, और इसलिए उस कारण-अवस्था में सदा विद्यमान रहता है। मनुष्यों के मन में “इकाई” की जो भ्रामक धारणा उत्पन्न होती है, वह मैत्रेय के अनुसार, केवल ऐसे अनेक परमाणुओं के संयोजन का परिणाम है। और जिस प्रकार पदार्थ का सूक्ष्मतम कण परमाणु के अस्तित्व की कल्पना कराता है, उसी प्रकार सम्पूर्ण अविभाजित, अविशिष्ट पदार्थ-समूह, जो अपने मूल स्रोत प्रकृति में परिवर्तित होने से पूर्व की अवस्था में है, हमें सबसे बड़ा मापदण्ड देता है — और काल को भी, मैत्रेय कहते हैं, इसी प्रकार मापा जा सकता है, क्योंकि काल स्वयं, भगवान् की एक शक्ति होने के कारण, सर्वव्यापी तथा अव्यक्त है, जो सूर्य के रूप में छोटी-बड़ी सभी वस्तुओं की सीमाओं को नापता हुआ गति करता है।

मैत्रेय उवाच । चरमः सद्विशेषाणामनेकोऽसंयुतः सदा ।

परमाणुः स विज्ञेयो नृणामैक्यभ्रमो यतः ॥ १ ॥

maitreya uvāca / caramaḥ sad-viśeṣāṇām aneko 'saṁyutaḥ sadā paramāṇuḥ sa vijñeyo nṛṇām aikya-bhramo yataḥ

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: पदार्थ का वह सूक्ष्मतम कण, जो और विभाजित नहीं हो सकता तथा जो अभी अन्य ऐसे कणों से संयुक्त नहीं हुआ है और उसी अवस्था में सदा विद्यमान रहता है, परमाणु कहलाता है; ऐसे अनेक परमाणुओं का संयोजन ही मनुष्यों के मन में एक “इकाई” की भ्रामक धारणा उत्पन्न करता है। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 1)

इस एकल परिभाषा से, मैत्रेय काल की सम्पूर्ण संरचना को उस धैर्यवान् गुरु की भाँति खड़ा करते हैं जो किसी भी अन्तराल को अधूरा नहीं छोड़ना चाहता। दो परमाणु मिलकर एक अणु बनाते हैं; तीन अणु मिलकर एक त्रसरेणु बनाते हैं — वही सूक्ष्म धूलिकण जो किसी अन्धकारपूर्ण कक्ष में, जालीदार खिड़की के छिद्रों से आती सूर्य-किरण में तैरता हुआ दिखाई देता है। यहाँ से मापदण्ड बढ़ता चला जाता है: गतिशील तीन त्रसरेणु मिलकर एक त्रुटि बनाते हैं; सौ त्रुटि मिलकर एक वेध बनाते हैं; तीन वेध मिलकर एक लव बनाते हैं; तीन लव मिलकर एक निमेष बनाते हैं, अर्थात् पलक झपकने का समय; तीन निमेष मिलकर एक क्षण बनाते हैं; पाँच क्षण मिलकर एक काष्ठा बनाते हैं; तथा पन्द्रह काष्ठा मिलकर एक लघु बनाते हैं।

स कालः परमाणुर्वै यो भुङ्क्ते परमाणुताम् ।

सतोऽविशेषभुग्यस्तु स कालः परमो महान् ॥ ४ ॥

sa kālaḥ paramāṇur vai yo bhuṅkte paramāṇutām sato 'viśeṣa-bhug yas tu sa kālaḥ paramo mahān

अर्थ: वह काल-मान जो, सूर्य के रूप में, पदार्थ के सूक्ष्मतम कण को पार करता है, परमाणु कहलाता है; तथा वह जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के जीवन-काल को व्याप्त करता है, वह सबसे बड़ा, सबसे दीर्घ काल-मान है। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 4)



मैत्रेय काल की अपनी शिक्षा का आरम्भ सबसे छोटी सम्भव इकाई, परमाणु, से करते हैं, तथा सूर्य-किरण में तैरते धूलिकणों के दृश्य द्वारा परमाणु-काल के आरोही मापदण्ड को स्पष्ट करते हैं (श्लोक 1-6)।

काल की सारणी: पलक झपकने से मानव-शताब्दी तक

मापदण्ड आगे बढ़ता रहता है, और यहाँ मैत्रेय की शिक्षा एक सैकण्ड के अंश से लेकर सम्पूर्ण मानव-जीवन के विस्तार तक, लगभग गणितीय सटीकता धारण कर लेती है। पन्द्रह लघु मिलकर एक नाड़िका कहलाते हैं; दो नाड़िका मिलकर एक मुहूर्त बनाते हैं; तथा छह या सात नाड़िका, दिन या रात के छोटे-बड़े होने के अनुसार, एक प्रहर बनाते हैं — मनुष्यों के दिन या रात्रि का एक चतुर्थांश। मैत्रेय उस यन्त्र का भी वर्णन करते हैं जिससे प्राचीन काल में नाड़िका मापी जाती थी: एक निश्चित भार तथा क्षमता वाला ताम्र-पात्र, जिसके तल में एक निश्चित माप की स्वर्ण-सूई से छिद्र किया जाता, तथा जिसे जल पर तैराया जाता — उस पात्र के जल से भरकर डूबने में लगा समय ही एक नाड़िका कहलाता है।

लघूनि वै समाम्नाता दश पञ्च च नाड़िका ।

ते द्वे मुहूर्तः प्रहरः षड्यामः सप्त नृणाम् ॥ ८ ॥

laghūni vai samāmnātā daśa pañca ca nāḍikā te dve muhūrtaḥ praharaḥ ṣaḍ yāmaḥ sapta vā nṛṇām

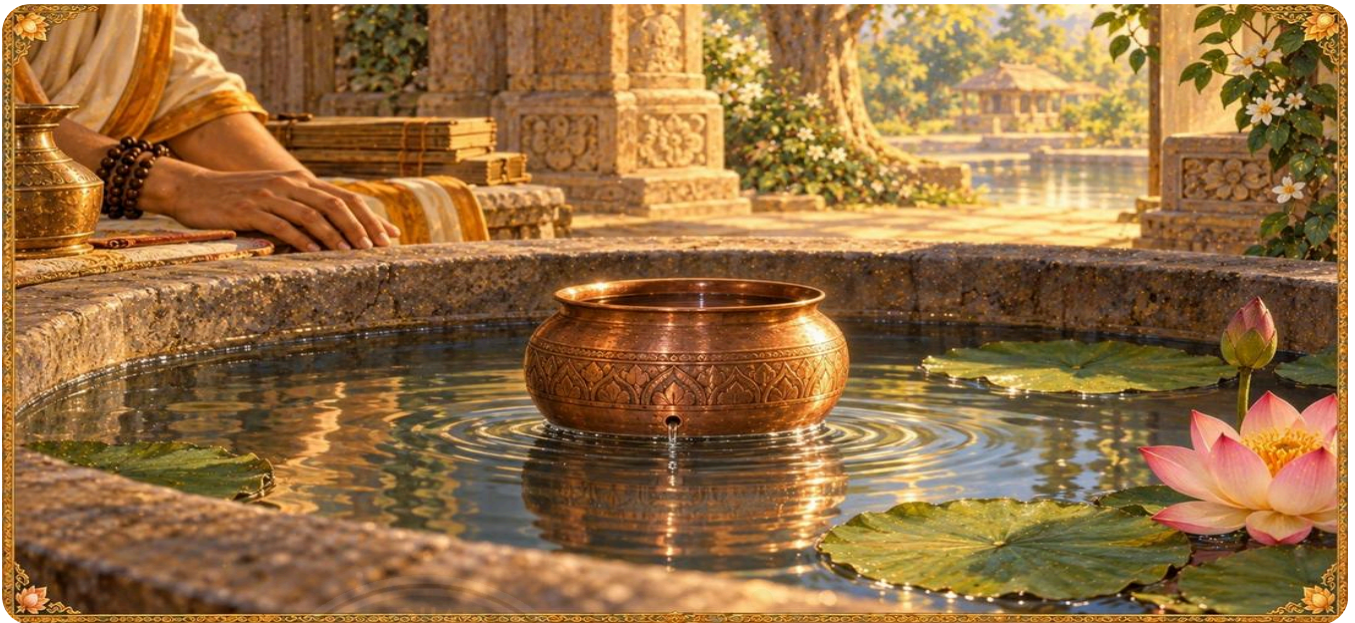
अर्थ: पन्द्रह लघु मिलकर एक नाड़िका बनाते हैं, ऐसा घोषित किया गया है; दो नाड़िका एक मुहूर्त बनाते हैं, जबकि छह या सात नाड़िका एक प्रहर बनाते हैं, जो मनुष्यों के दिन या रात्रि का एक चतुर्थांश है। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 8)

यहाँ से मैत्रेय शीघ्रता से परिचित मानव-पंचांग की ओर बढ़ते हैं — चार प्रहर मिलकर एक दिन, पन्द्रह दिन-रात्रि मिलकर एक पक्ष (एक शुक्ल, एक कृष्ण), दो पक्ष मिलकर एक मास, दो मास मिलकर एक ऋतु, छह मास मिलकर एक अयन, तथा दो अयन — दक्षिणायन और उत्तरायण, बारी-बारी से — मिलकर एक सम्पूर्ण वर्ष बनाते हैं, जो स्वर्ग के देवताओं का एक दिन-रात्रि भी माना जाता है, ठीक वैसे ही जैसे मनुष्यों का एक मास पितरों का एक दिन-रात्रि होता है। ऐसे सौ वर्ष, मैत्रेय कहते हैं, मनुष्य के जीवन की सम्पूर्ण अवधि घोषित की गई है। इस दीर्घ, क्रमिक शृंखला को सुगमता से समझने हेतु, इस अध्याय में मैत्रेय द्वारा वर्णित इकाइयों को एक सारणी में संकलित किया जा सकता है:

इकाई	बराबर है	अनुमानित मान
परमाणु	काल तथा पदार्थ की अविभाज्य अन्तिम इकाई	अपरिमित रूप से सूक्ष्म
अणु	2 परमाणु	—
त्रसरेणु	3 अणु	सूर्य-किरण में तैरता धूलिकण
त्रुटि	3 गतिशील त्रसरेणु	—
वेध	100 त्रुटि	—
लव	3 वेध	—
निमेष	3 लव	पलक झपकने का समय
क्षण	3 निमेष	एक पल
काष्ठा	5 क्षण	—
लघु	15 काष्ठा	—
नाड़िका (दण्ड)	15 लघु	लगभग 24 मिनट
मुहूर्त	2 नाड़िका	लगभग 48 मिनट
प्रहर	6-7 नाड़िका	दिन/रात्रि का एक चतुर्थांश
दिन-रात्रि (मानव)	प्रत्येक 4 प्रहर	24 घण्टे
पक्ष	15 दिन-रात्रि	मास का शुक्ल अथवा कृष्ण अर्ध
मास	2 पक्ष	पितरों का एक दिन-रात्रि
ऋतु	2 मास	—
अयन	6 मास	सूर्य की दक्षिणायन/उत्तरायण गति
वर्ष	2 अयन	देवताओं का एक दिन-रात्रि; 100 वर्ष = मनुष्य का पूर्ण जीवन
चतुर्युग	कृत + त्रेता + द्वापर + कलि	12,000 दिव्य वर्ष (43,20,000 मानव वर्ष)
ब्रह्मा का एक दिन	1,000 चतुर्युग	इसके बाद एक समान रात्रि
मन्वन्तर	लगभग 71 चतुर्युग	ब्रह्मा के एक दिन के भीतर एक मनु का शासन-काल
पराध	ब्रह्मा के 100 वर्ष के जीवन का आधा	प्रथम पराध पूर्ण हो चुका है
ब्रह्मा का सम्पूर्ण जीवन	2 पराध	प्रतीकात्मक रूप से, भगवान् की एक पलक झपकना

सूर्य स्वयं, मैत्रेय जोड़ते हैं, इस सम्पूर्ण मापदण्ड का जीवन्त स्वरूप है: सदा-जागरूक सूर्यदेव, जो भगवान् का ही एक स्वरूप तथा काल-पुरुष के समान हैं, ग्रहों, नक्षत्रों तथा अन्य तारों के मध्य रहते हुए, परमाणु से वर्ष तक इस सम्पूर्ण मापदण्ड को चिह्नित करते हुए ब्रह्माण्ड की परिक्रमा करते हैं। वर्ष स्वयं पाँच नामों से जाना जाता है — संवत्सर, परिवत्सर, इडावत्सर, अनुवत्सर तथा वत्सर — इसके अनुसार कि उसे सूर्य, बृहस्पति अथवा चन्द्रमा की गति से मापा जाता है, तथा मैत्रेय अध्याय के इस प्रथम खण्ड को यह कहते हुए समाप्त करते हैं कि सूर्यदेव को

अर्घ्य अर्पित किया जाना चाहिए, जो अपनी काल नामक शक्ति द्वारा बीज की अंकुरण-क्षमता को विविध रूपों में प्रकट करते हैं, जो पाँच स्थूल तत्त्वों में से एक अग्नि के रूप में आकाश में गमन करते हुए मनुष्यों के जीवन-काल को छोटा करके उनकी इन्द्रिय-सुखों की आसक्ति को दूर करते हैं, तथा जो यज्ञ करने वालों को अनेक प्रकार के फल प्रदान करते हैं।



मैत्रेय उस प्राचीन जल-घड़ी का वर्णन करते हैं जिससे एक नाड़िका मापी जाती थी — एक छिद्रित ताम्र-पात्र जल पर तैराया जाता, तथा उसके भरकर डूबने में लगा समय स्वयं समय को नापता (श्लोक 7-9)।

विदुर का प्रश्न: तीनों लोकों से परे रहने वालों का क्या?

पितरों, देवताओं तथा मनुष्यों के सामान्य काल का सम्पूर्ण मापदण्ड सुनने के पश्चात्, विदुर एक स्वाभाविक प्रश्न पूछते हुए बीच में आते हैं, जो जिज्ञासा को और आगे बढ़ाता है। उन्होंने समझ लिया है, वे कहते हैं, तीनों लोकों के भीतर के प्राणियों को नियन्त्रित करने वाला सौ वर्ष का यह मापदण्ड; परन्तु उन उच्चतर, अधिक ज्ञानी प्राणियों का क्या — स्वयं ब्रह्मा, तथा सनक एवं भृगु जैसे ऋषि — जो इन्द्र के स्वर्ग से परे, तीनों लोकों की पहुँच से बाहर निवास करते हैं? विदुर का अपने गुरु पर विश्वास पूर्ण है: निश्चय ही, वे कहते हैं, जिसने योग की दृष्टि पूर्ण कर ली है, वह सर्वशक्तिमान् काल की सम्पूर्ण गति को यथार्थ रूप में देख सकता है। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 16-17।)

इस छोटे से संवाद के स्वरूप पर रुककर विचार करना उचित है। विदुर यह प्रश्न व्यर्थ नहीं पूछते। सामान्य काल का सम्पूर्ण ढाँचा — यहाँ तक कि जिस यन्त्र से एक नाड़िका मापी जाती है, उस तक — अभी-अभी दिए जाने के पश्चात्, वे सही ढंग से अनुभव करते हैं कि कुछ और भी विशाल शेष है: एक ऐसा काल-मापदण्ड जो तीनों लोकों के भीतर के मनुष्यों तथा देवताओं के लिए नहीं, अपितु सृष्टि के स्वयं वास्तुकारों के लिए उपयुक्त है। इस प्रश्न का मैत्रेय का उत्तर ही अध्याय का दूसरा तथा बड़ा खण्ड है — एक उत्तर जो विदुर को, तथा पाठक को, चार युगों से लेकर ब्रह्मा के सम्पूर्ण जीवन-काल तक ले जाएगा।



मानव तथा मन्वन्तर के काल-मापदण्ड को समझ लेने के पश्चात्, विदुर मैत्रेय से उन उच्चतर, ज्ञानी प्राणियों जैसे ब्रह्मा के जीवन-काल के विषय में पूछते हैं जो तीनों लोकों से परे निवास करते हैं (श्लोक 16-17)।

चार युग तथा धर्म का क्षीण होना

मैत्रेय का उत्तर चार युगों से आरम्भ होता है — कृत (या सत्य), त्रेता, द्वापर तथा कलि — जो, अपनी सन्ध्या तथा सन्ध्यांश (प्रत्येक युग के आरम्भ तथा अन्त को चिह्नित करने वाले संक्रमण-काल) सहित, कुल मिलाकर बारह हजार दिव्य वर्ष, अर्थात् 43,20,000 मानव वर्ष होते हैं। प्रत्येक युग अपने से पूर्व के युग से क्रमशः छोटा होता जाता है: कृत चार हजार दिव्य वर्ष (तथा सन्ध्या-सन्ध्यांश मिलाकर आठ सौ वर्ष अधिक) तक विस्तृत है, त्रेता तीन हजार, द्वापर दो हजार, तथा कलि एक हजार — प्रत्येक की अपनी आनुपातिक संक्रमण-अवधि सहित।

मैत्रेय उवाच । कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।

दिव्यैर्द्वादशभिर्वर्षैः सावधानं निरूपितम् ॥ १८ ॥

maitreya uvāca / kṛtaṁ tretā dvāparaṁ ca kaliś ceti catur-yugam divyair dvādaśabhir varṣaiḥ sāvadhānaṁ nirūpitam

अर्थ: मैत्रेय ने उत्तर दिया: चार युग — कृत, त्रेता, द्वापर तथा कलि — अपनी संक्रमण-अवधियों सहित, बारह हजार दिव्य वर्षों के रूप में घोषित किए गए हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 18)

इस वर्णन में सबसे महत्वपूर्ण बात केवल गणित नहीं, अपितु यह है कि मैत्रेय धर्म का, स्वयं सदाचार का, युगों के परिवर्तन के साथ क्या होता है, यह बताते हैं। कृत युग में, वे बताते हैं, धर्म अपने चारों चरणों में पूर्ण रूप से विद्यमान रहता है — कठोर तप, आन्तरिक तथा बाह्य शुद्धता, करुणा, तथा सत्यनिष्ठा। इसके पश्चात् प्रत्येक युग में, जैसे-जैसे अधर्म बढ़ता है, धर्म एक-एक चरण घटता जाता है: पहले त्रेता में तप; फिर द्वापर में शुद्धता भी; यहाँ तक कि कलि में केवल सत्यनिष्ठा ही मनुष्यों के बीच व्यापक रूप से पाले जाने वाले धर्म के अन्तिम सूत्र के रूप में शेष रहती है। यह पतन का एक शान्त, अलंकारहीन चित्रण है — निराशा का कारण बनाने के लिए नहीं, अपितु यह सरलता से दिखाने के लिए दिया गया है कि काल स्वयं, अपने विशालतम ब्रह्माण्डीय विस्तार में, किसी युग की नैतिक स्थिति को कैसे आकार देता है।

ब्रह्मा का एक दिन-रात्रि, तथा मनुओं का शासन

युगों को मापदण्ड पर स्थापित करने के पश्चात्, मैत्रेय अब अध्याय का सबसे बड़ा कदम उठाते हैं। चार युगों के एक हजार पूर्ण चक्र, वे कहते हैं, तीनों लोकों से परे, ब्रह्मा के धाम तक, ब्रह्मा का एक दिन बनाते हैं; तथा उतनी ही लम्बाई उनकी रात्रि की है, जिसमें ब्रह्मा तीनों लोकों को अपने भीतर समेटकर सो जाते हैं।

त्रिलोक्या युगसाहस्रं बहिराब्रह्मणो दिनम् ।

तावत्येव निशा तात यन्निमीलति विश्वसृक् ॥ २२ ॥

tri-lokyā yuga-sāhasram bahir ābrahmaṇo dinam tāvaty eva niśā tāta yan nimīlati viśva-sṛk

अर्थ: चार युगों के एक हजार आवर्तन, तीनों लोकों से परे, ब्रह्मा के धाम तक, एक दिन बनाते हैं; तथा हे प्रिय, रात्रि उतनी ही लम्बी है, जिसमें ब्रह्माण्ड के रचयिता अपने नेत्र मूँदकर सो जाते हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 22)

ब्रह्मा की रात्रि के समापन पर, सृष्टि पहले की भाँति पुनः आरम्भ होती है, तथा उनके जाग्रत दिन के दौरान चौदह मनुओं के क्रमिक शासन तक चलती रहती है — प्रत्येक मनु चार युगों के लगभग इकहत्तर चक्रों के काल तक शासन करते हैं, ऐसे एक शासन-काल को मन्वन्तर कहा जाता है। प्रत्येक मन्वन्तर में, मैत्रेय बताते हैं, एक विशिष्ट मनु तथा उनके अपने वंशज उत्पन्न होते हैं, साथ ही एक विशिष्ट सप्तर्षि-मण्डल, देवताओं की एक विशिष्ट सभा, तथा अपने परिचरों सहित एक विशिष्ट इन्द्र — मनु के अपने वंशजों को छोड़कर, ये सभी मन्वन्तर के आरम्भ में एक साथ उत्पन्न होते हैं।

मन्वन्तरेषु मनवस्तद्वंश्या ऋषयः सुराः ।

भवन्ति चैव युगपत्सुरेशाश्चानु ये च तान् ॥ २५ ॥

manvantareṣu manavas tad-vaṁśyā ṛṣayaḥ surāḥ bhavanti caiva yugapat sureśāś cānu ye ca tān

अर्थ: प्रत्येक मन्वन्तर में, मनु तथा उनका वंश, सप्तर्षि, तथा देवता, सभी एक साथ, एक ही समय में प्रकट होते हैं, साथ ही देवताओं के अधिपति इन्द्र तथा उनका अनुसरण करने वाले भी। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 25)

यह, मैत्रेय कहते हैं, ब्रह्मा की दैनिक सृष्टि है — एक सृष्टि जो केवल तीनों लोकों तक सीमित है, जिसमें उपमानव प्राणी, मनुष्य, पितर, तथा देवता, सभी अपने-अपने संचित कर्म के अनुसार जन्म लेते हैं। प्रत्येक मन्वन्तर में भगवान् सत्त्वगुण धारण करते हैं, तथा मनुओं तथा अन्य युग-रक्षकों के माध्यम से अपनी शक्ति प्रकट करते हुए ब्रह्माण्ड की रक्षा करते हैं। परन्तु ब्रह्मा के दिन के समापन पर, तमोगुण का एक अंश स्वयं ब्रह्मा को भी स्पर्श करता है; उनकी क्रिया शिथिल हो जाती है, तथा काल के बल से सब कुछ पुनः उनमें समेट लिया जाता है, यहाँ तक कि उनकी रात्रि भी अपना क्रम पूर्ण कर लेती है।



चार युगों के एक हजार चक्र मिलकर ब्रह्मा का एक दिन बनाते हैं, जिसके दौरान चौदह मनु क्रमिक रूप से शासन करते हैं, तथा प्रत्येक मन्वन्तर अपने साथ ऋषियों, देवताओं तथा एक इन्द्र की अपनी विशिष्ट सभा लाता है (श्लोक 22-26)।

महाप्रलय तथा कारण-जल पर शयन करते भगवान्

मैत्रेय अब उसी सावधानीपूर्ण सटीकता से वर्णन करते हैं कि जब एक और भी विशाल रात्रि उतरती है — केवल ब्रह्मा की दैनिक निद्रा की रात्रि नहीं, अपितु सार्वभौमिक प्रलय की रात्रि, जब चन्द्रमा तथा सूर्य स्वयं अदृश्य हो जाते हैं तथा तीनों लोक, भूः, भुवः तथा स्वः, पूर्णतः ब्रह्मा के शरीर में समा जाते हैं — तब क्या होता है। वे इस प्रलय की प्रक्रिया को अत्यन्त सजीव शब्दों में वर्णित करते हैं: तीनों लोक भगवान् संकर्षण के मुख से निकली अग्नि द्वारा भस्म कर दिए जाते हैं, तथा इन्द्र के स्वर्ग के ठीक ऊपर महर्लोक में निवास करने वाले भृगु आदि ऋषिगण उस विशाल अग्नि की उष्णता से पीड़ित होकर महर्लोक से आगे जनलोक की ओर चले जाते हैं। साथ ही, सातों समुद्र प्रलय के समीप आने पर अपनी सीमाएँ लांघ जाते हैं, उनका जल असामान्य रूप से उमड़ता है तथा प्रचण्ड आँधियों से उठती लहरों के साथ, अत्यल्प समय में ही तीनों लोकों को जलमग्न कर देता है।

तथा उस विशाल जलराशि के मध्य में, मैत्रेय कहते हैं, श्रीहरि स्वयं भगवान् अनन्त की शय्या पर, ध्यान-निद्रा में नेत्र मूँदे, विराजमान रहते हैं, जबकि जनलोक के निवासी चारों ओर से उनकी स्तुति करते हैं।

अन्तः स तस्मिन् सलिल आस्तेऽनन्तासनो हरिः ।

योगनिद्रानिमीलाक्षः स्तूयमानो जनालयैः ॥ ३२ ॥

antaḥ sa tasmin salila āste 'nantāsano hariḥ yoga-nidrā-nimīlākṣaḥ stūyamāno janālayaiḥ

अर्थ: उस अपार जलराशि के भीतर श्रीहरि स्वयं अनन्त की शय्या पर विराजमान हैं, उनके नेत्र योग-निद्रा में मुँदे हुए हैं, जबकि जनलोक-वासी ऋषिगण चारों ओर से उनकी महिमा का गान करते हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 31, गीता प्रेस क्रमांकन में; देखें सत्यापन-टिप्पणियाँ।)

यह दृश्य — भगवान् का उन्हीं जल में शान्तिपूर्वक विश्राम करना जिन्होंने तीनों लोकों को निगल लिया है — सम्पूर्ण भागवत के सबसे स्थायी दृश्यों में से एक है, तथा मैत्रेय इसे यहाँ किसी संकट के क्षण के रूप में नहीं, अपितु स्थिरता के एक क्षण के रूप में प्रस्तुत करते हैं: ब्रह्माण्ड अनिर्मित हो चुका है, परन्तु उसका रचयिता अविचलित है। इन दिनों-रात्रियों के इसी क्रमिक परिवर्तन के साथ, मैत्रेय बताते हैं, ब्रह्मा के जीवन के सम्पूर्ण सौ वर्ष भी — जो इस सृष्टि में सबसे दीर्घ जीवन-काल है — समय के साथ व्यतीत हो जाते हैं।



महाप्रलय के समय, तीनों लोक उमड़ते हुए समुद्रों में जलमग्न हो जाते हैं, जबकि श्रीहरि भगवान् अनन्त की शय्या पर, कारण-जल के मध्य, ध्यान-निद्रा में नेत्र मूँदे विराजमान रहते हैं (श्लोक 27-32)।

दो पराधः ब्रह्म, पद्म, तथा वराह कल्प

ब्रह्मा के एक दिन-रात्रि के मापदण्ड से, मैत्रेय अब ब्रह्मा के सम्पूर्ण जीवन के विस्तार की ओर बढ़ते हैं। उस सौ वर्ष के जीवन का आधा भाग, वे बताते हैं, पराध कहलाता है; प्रथम पराध पहले ही व्यतीत हो चुका है, तथा द्वितीय पराध अब वर्तमान कल्प से चल रहा है।

यदर्थमायुषस्तस्य परार्धमभिधीयते ।

पूर्वः परार्धोऽपक्रान्तो ह्यपरोऽद्य प्रवर्तते ॥

(स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 33)

yad ardham āyusas tasya parārdham abhidhīyate pūrvaḥ parārdho 'pakrānto hy aparo 'dya pravartate

अर्थः ब्रह्मा की सौ वर्ष की सम्पूर्ण आयु का आधा अंश पराध नाम से जाना जाता है; इसका प्रथम भाग समाप्त हो चुका है, और द्वितीय भाग इस समय गतिमान है। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 33)

प्रथम पराध, मैत्रेय कहते हैं, ब्रह्म-कल्प नामक एक महत्त्वपूर्ण कल्प से आरम्भ हुआ, जिसमें स्वयं ब्रह्मा प्रकट हुए तथा ज्ञानीजनों द्वारा साक्षात् वेद-स्वरूप के रूप में पहचाने गए; तथा वही पराध पद्म-कल्प के साथ समाप्त हुआ, जिसमें श्रीहरि की नाभि के जलाशय से सम्पूर्ण लोकों को धारण करने वाला कमल उत्पन्न हुआ। वर्तमान युग, मैत्रेय विदुर को बताते हैं, द्वितीय पराध का आरम्भिक कल्प है — वराह-कल्प, इस नाम से जाना जाता है क्योंकि श्रीहरि ने इसी कल्प में वराह का रूप धारण किया था। तथा दो पराधों की यह सम्पूर्ण अवधि, असंख्य मन्वन्तरों तथा कल्पों को समेटे हुए, मैत्रेय कहते हैं, उस अपरिवर्तनशील, अमर, अनादि भगवान् की दृष्टि से, जो स्वयं ब्रह्माण्ड की आत्मा हैं, मात्र एक पलक झपकने के समान कही जाती है।

कालोऽयं परमाण्वादिर्द्विपरार्धान्त ईश्वरः ।

नैवेशितुं प्रभुर्भूम ईश्वरो धाममानिनाम् ॥ ३९ ॥

kālo 'yaṁ paramāṇv-ādir dvi-parārdhānta īśvaraḥ naivesītuṁ prabhur bhūmna īśvaro dhāma-māninām

अर्थ: यह सर्वशक्तिमान् काल, परमाणु से लेकर दो पराधों की अवधि तक, सर्वव्यापी भगवान् पर कोई शक्ति नहीं रखता; यह केवल उन पर अधिकार रखता है जिन्होंने अपने आप को शरीर के साथ पहचाना है। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 38, गीता प्रेस क्रमांकन में; देखें सत्यापन-टिप्पणियाँ।)

यही, एक अर्थ में, इस सम्पूर्ण अध्याय का दार्शनिक केन्द्र है, जो उस सम्पूर्ण श्रमसाध्य मापन के पश्चात् ही प्रकट होता है। मैत्रेय ने काल के इस विशालतम सम्भव मापदण्ड — परमाणु से पराध तक, पल से मन्वन्तर तक — को लगभग चालीस श्लोकों में सम्पूर्ण सटीकता से खड़ा किया है, केवल यह निष्कर्ष देने के लिए कि यह सम्पूर्ण भव्य संरचना स्वयं भगवान् पर कोई अधिकार नहीं रखती। काल का साम्राज्य, विशाल होते हुए भी, केवल उन्हीं पर फैलता है जिन्होंने अपने आप को शरीर के साथ पहचाना है; शरीर से परे भगवान्, उसी तर्क से, काल की पहुँच से भी सर्वथा परे हैं।



मैत्रेय उन कल्पों के नाम बताते हैं जो ब्रह्मा के जीवन के दो पराधों को चिह्नित करते हैं — ब्रह्म-कल्प जिसमें स्वयं ब्रह्मा प्रकट हुए, पद्म-कल्प जिसमें हरि की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ, तथा वर्तमान वराह-कल्प (श्लोक 33-38)।

एक परमाणु के समान ब्रह्माण्ड, तथा सभी कारणों का कारण

अध्याय का अन्तिम खण्ड दृष्टि को उसके सबसे विस्तृत सम्भव विस्तार तक ले जाता है। यह अण्डाकार ब्रह्माण्ड, मैत्रेय बताते हैं, आठ कारण-तत्त्वों तथा सोलह विकारों से निर्मित, पचास करोड़ योजन की चौड़ाई रखता है, तथा बाहर से सात क्रमिक आवरणों — पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, अहंकार, तथा महत्तत्त्व — से आवृत है, जिनमें प्रत्येक आवरण अपने भीतर वाले से दस गुना बड़ा है। तथा वह सभी कारणों का कारण, मैत्रेय कहते हैं, जिसमें यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, अपने सभी आवरणों सहित, एक परमाणु के समान प्रतीत होता है, तथा जो अपने भीतर ऐसे असंख्य अन्य ब्रह्माण्डों को समेटे हुए है, अक्षर ब्रह्म कहलाता है — तथा यही उन सबसे प्राचीन पुरुष, भगवान् विष्णु, साक्षात् परमात्मा की परम, दिव्य वास्तविकता है।

विकारैः सहितो युक्तैर्विशेषादिभिरावृतः ।

आण्डकोशो बहिरयं पञ्चाशत्कोटिविस्तृतः ॥

...

तदाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारणकारणम् ।

विष्णोर्धाम परं साक्षात्पुरुषस्य महात्मनः ॥

vikāraiḥ sahito yuktair viśeṣādibhir āvṛtaḥ / āṇḍakośo bahir ayaṁ pañcāśat-koṭi-vistṛtaḥ ... tad āhur akṣaram brahma sarva-kāraṇa-kāraṇam / viṣṇor dhāma param sākṣāt puruṣasya mahātmanaḥ

अर्थ: अपने विकारों सहित, क्रमिक आवरणों से आवृत, यह अण्डाकार ब्रह्माण्ड बाहर से अत्यन्त विशाल है — तथा वह सभी कारणों का कारण, जिसमें यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मात्र एक परमाणु के समान प्रतीत होता है, अक्षर ब्रह्म कहलाता है, स्वयं भगवान् विष्णु, साक्षात् परम पुरुष का परम धाम। (स्कन्ध 3, अध्याय 11, श्लोक 39-41, गीता प्रेस क्रमांकन में; देखें सत्यापन-टिप्पणियाँ।)

इस एकल, विस्मयकारी चित्र के साथ — एक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को परम-सत्य के वास्तविक मापदण्ड की तुलना में एक परमाणु के आकार तक सीमित किया गया है — मैत्रेय काल-विभागों पर अपनी शिक्षा का समापन करते हैं, तथा तृतीय स्कन्ध का एकादश अध्याय समाप्त होता है। द्वादश अध्याय, “सृष्टि की बहुविधता”, तुरन्त पश्चात् आरम्भ होता है, जो इस कथा को आगे बढ़ाता है कि ब्रह्मा उस ब्रह्माण्ड को, जिसका मापदण्ड अभी-अभी दिया गया है, वास्तव में कैसे बसाते हैं।

इस अध्याय की मुख्य शिक्षाएँ

1. काल की स्वयं एक सटीक, ज्ञेय संरचना है, सबसे छोटे सम्भव क्षण से लेकर सबसे बड़े सम्भव युग तक। मैत्रेय की अध्याय-भर चलने वाली अखण्ड शृंखला — परमाणु से अणु, त्रसरेणु, त्रुटि, तथा आगे नाड़िका, युग, मन्वन्तर, तथा पराध तक — काल के मापन को काव्य के रूप में नहीं, अपितु सटीक, शिक्षणीय ज्ञान के रूप में प्रस्तुत करती है (श्लोक 1-15)।

2. धर्म स्वयं काल-बद्ध है, तथा उसके चारों चरण युगों के साथ एक-एक करके क्षीण होते जाते हैं। कृत युग के सम्पूर्ण चतुर्विध धर्म से लेकर कलि में जीवित रहने वाले सत्यनिष्ठा के एकल सूत्र तक, यह अध्याय नैतिक पतन को दुर्घटना के रूप में नहीं, अपितु उसी नियम-बद्ध संरचना के भाग के रूप में प्रस्तुत करता है जो एक दिन की लम्बाई को भी नियन्त्रित करती है (श्लोक 18-21)।

3. सृष्टि, पालन, तथा प्रलय प्रत्येक मापदण्ड पर अनन्त रूप से पुनरावृत्त होते हैं। सामान्य मनुष्यों का एक दिन-रात्रि; चौदह मन्वन्तरों से भरा ब्रह्मा का एक दिन-रात्रि; तीनों लोकों को जलमग्न करने वाला आवधिक प्रलय — इस अध्याय में जागरण तथा निद्रा की वही मूल लय प्रत्येक स्तर पर पुनरावृत्त होती है (श्लोक 22-32)।

4. प्रलय में भी भगवान् विश्राम में हैं, संकट में नहीं। श्रीहरि का कारण-जल पर शान्तिपूर्वक शयन करते हुए चित्रण, जबकि तीनों लोक जलमग्न पड़े हैं, यह सिखाता है कि भगवान् की शान्ति सबसे विशाल ब्रह्माण्डीय विनाश से भी अस्पर्शित रहती है (श्लोक 31)।

5. काल का सम्पूर्ण मापदण्ड, चाहे कितना भी विशाल क्यों न हो, स्वयं भगवान् पर कोई शक्ति नहीं रखता। काल का सबसे विस्तृत सम्भव मापन खड़ा करने के पश्चात्, मैत्रेय की वास्तविक शिक्षा यह है कि यह मापन केवल उन्हीं पर लागू होता है जिन्होंने अपने आप को शरीर के साथ पहचाना है — शरीर से परे भगवान्, उसी तर्क से, काल से भी सर्वथा परे हैं (श्लोक 38-41)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय की संरचना में ही एक शान्त विनम्रता निहित है, जिसे उसके अंकों के मध्य पहचानना सरल नहीं। मैत्रेय किसी विशाल दर्शन से आरम्भ नहीं करते; वे सबसे छोटी, सबसे विनम्र कल्पनीय इकाई से आरम्भ करते हैं — पदार्थ का वह कण जो और विभाजित नहीं हो सकता — तथा तभी, धैर्यपूर्वक, इकाई-दर-इकाई, ब्रह्मा के सम्पूर्ण जीवन-काल तक पहुँचते हैं। इस पद्धति में निहित शिक्षा पर विचार करना उचित है: इस परम्परा के सबसे विशाल सत्य छोटे सत्यों को लांघकर नहीं, अपितु उनके माध्यम से, धैर्यपूर्वक, एक-एक सावधान कदम से निर्मित होकर पहुँचे जाते हैं। मैत्रेय के लिए यह सम्भव होता कि वे केवल ब्रह्मा के जीवन की लम्बाई घोषित कर दें और वहीं समाप्त हो जाएँ। इसके स्थान पर वे विदुर को प्रत्येक मध्यवर्ती इकाई से होकर ले जाते हैं, मानो यह कहते हुए कि ब्रह्माण्डीय काल की विशालता तभी सचमुच विश्वसनीय बनती है, तभी सचमुच ग्राह्य होती है, जब उसकी सबसे छोटी निर्माण-इकाई को पहले भली-भाँति समझ लिया जाए। और जब यह आरोहण अन्ततः पूर्ण होता है — जब ब्रह्मा के अपने सौ वर्ष, पराधों से, कल्पों से, मन्वन्तरों से, युगों से, तथा अन्ततः परमाणुओं से निर्मित होते हैं — मैत्रेय का निष्कर्ष काल की विशालता पर विस्मय का नहीं, अपितु एक गहरे विस्मय का है: कि जिस भगवान् ने इस सम्पूर्ण मापदण्ड को गति दी, वे स्वयं उसके किसी भी अंश में समाहित नहीं हैं।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, अपने ही समय की एक साधारण इकाई लीजिए — एक घण्टा, अथवा एक भी शान्त श्वास — तथा उसे संक्षेप में उसी प्रकार धारण कीजिए जैसे मैत्रेय एक निमेष अथवा क्षण को धारण करते हैं: कुछ ऐसा जो सटीक है, नाम लेने योग्य है, आदर के योग्य है, न कि केवल बिना ध्यान दिए बीत जाने योग्य। ध्यान दें कि एक छोटा, सावधानीपूर्वक ध्यान दिया गया क्षण, अपने ढंग से, एक सम्पूर्ण, असावधानी में व्यतीत किए गए दिन जितना ही यथार्थ धारण कर सकता है। फिर अपने मन को, विदुर की भाँति, उस एकल छोटे क्षण से सबसे विशाल कल्पनीय मापदण्ड की ओर — एक कल्प, एक युग, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का जीवन — विचरण करने दें, तथा दोनों मापदण्डों, छोटे तथा विशाल, को उसी एक स्थान पर विश्राम करने दें: उस भगवान् में जिन्होंने काल को स्वयं गति दी, और फिर भी जो उससे अस्पर्शित रहते हैं। अपने दिन में लौटने से पहले, रुकें और शान्तिपूर्वक दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” उस स्मरण को उस स्थिर बिन्दु बनने दें जिसके चारों ओर काल स्वयं, अपने सबसे छोटे से सबसे बड़े मापदण्ड तक, अन्ततः घूमता हुआ समझा जाता है।

उपसंहार

तृतीय स्कन्ध का एकादश अध्याय, अपने ऊपरी स्वरूप में, तृतीय स्कन्ध का अब तक का सबसे तकनीकी अध्याय है — ब्रह्माण्डीय काल के मापदण्ड का एक सावधानीपूर्ण, लगभग गणितीय प्रकटन, अविभाज्य परमाणु से लेकर ब्रह्मा के अपने जीवन के दो विशाल पराधों तक। फिर भी इसके अंकों के नीचे भागवत की किसी भी अन्य शिक्षा जितनी ही भक्तिपूर्ण एक शिक्षा निहित है। मैत्रेय काल को स्वयं काल के लिए नहीं मापते; वे इसे इसलिए मापते हैं ताकि उसकी वास्तविक सीमा अन्ततः देखी जा सके — वह बिन्दु जहाँ ब्रह्माण्डीय अवधि का सबसे भव्य सम्भव मापदण्ड भी बस रुक जाता है, उस भगवान् पर कोई अधिकार न रखते हुए जो शरीर से परे, पहचान से परे, यहाँ तक कि उन्हीं श्रेणियों से परे विद्यमान हैं जो काल को अर्थपूर्ण बनाती हैं। विदुर ने, अत्यन्त उचित रूप से, देवताओं तथा मनुष्यों से बड़े प्राणियों के जीवन-काल के विषय में पूछा था। मैत्रेय ने उस प्रश्न का पूर्ण तथा सटीक उत्तर दिया — और उसी श्वास में, उन्हें कुछ और भी महान् दिखाया: कि काल की प्रत्येक इकाई के पीछे, चाहे वह कितनी भी छोटी अथवा कितनी भी विशाल क्यों न हो, वह पुरुष खड़े हैं जिन्हें कोई भी इकाई माप नहीं सकती।

श्रीमद्भागवत की दिव्य ज्ञान-ज्योति हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा श्रेय

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), तृतीय पुस्तक, एकादश अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम् • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पंडित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-3-chapter-11-divisions-of-time-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट